A Pratibha Spandan Journal
SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320-7175 (O) | Volume 14, Issue 02, April 2026 (Special Issue)
This paper was presented at the 'Swar Sanskar National Seminar', organized by Swar Sanskar Sangeet Gurukul
Seminar Convener: Dr. Yash Sanjay Dewale (Co-Founder: Swar Sanskar Sangeet Gurukul, Assistant Professor: MSU Baroda)

गुरु शिष्य परंपरा का बदलता परिदृश्य

Dr. Shaina
Assistant Professor, Department of Music Instrumental, Govt. College for Girls, Patiala

Read the Article Online
OPEN ACCESS
Published on 30 April, 2026

सार

यह शोध-पत्र भारतीय संस्कृति की प्राचीन गुरु-शिष्य परंपरा के स्वरूप, महत्व, ऐतिहासिक विकास तथा आधुनिक समय में आए परिवर्तनों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। गुरु-शिष्य परंपरा केवल शिक्षा का माध्यम नहीं, बल्कि नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक मूल्यों के संचार का आधार रही है, जिसमें गुरु को मार्गदर्शक और शिष्य को समर्पित साधक माना गया है। वैदिक काल की गुरुकुल प्रणाली से लेकर मध्यकालीन भक्ति आंदोलन तक इस परंपरा ने समाज को ज्ञान और संस्कार प्रदान किए।

आधुनिक युग में तकनीकी विकास, शिक्षा का संस्थानीकरण, व्यावसायीकरण और सामाजिक परिवर्तनों ने इस परंपरा के स्वरूप को प्रभावित किया है। परिणामस्वरूप गुरु-शिष्य संबंधों में औपचारिकता, मानवीय दूरी, ज्ञान का सतहीकरण तथा शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट जैसी चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं। शोध-पत्र में इन चुनौतियों के समाधान हेतु नैतिक शिक्षा के पुनर्स्थापन, तकनीक के संतुलित उपयोग, शिक्षक प्रशिक्षण, व्यक्तिगत संबंधों के विकास और शिक्षा के गैर-व्यावसायीकरण पर बल दिया गया है।

अंततः यह निष्कर्ष निकाला गया है कि परंपरा और आधुनिकता के संतुलन के माध्यम से गुरु-शिष्य परंपरा को पुनर्जीवित किया जा सकता है।

मुख्य शब्द: गुरु-शिष्य परंपरा, भारतीय संस्कृति, नैतिक शिक्षा, तकनीकी परिवर्तन, शिक्षा का व्यावसायीकरण

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में गुरु-शिष्य परंपरा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्राचीन काल से ही यह परंपरा ज्ञान, संस्कार और जीवन मूल्यों के संचार का प्रमुख माध्यम रही है। गुरु को भगवान के समान माना गया और शिष्य को उनके चरणों में बैठकर ज्ञान प्राप्त करने का अवसर मिलता था। यह संबंध केवल शैक्षणिक नहीं बल्कि आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक भी था। परंतु आधुनिक युग में विज्ञान, तकनीकी विकास, वैश्वीकरण और बदलती जीवनशैली के कारण इस परंपरा में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं। ये परिवर्तन एक ओर जहाँ नए अवसर लेकर आए हैं, वहीं दूसरी ओर कई चुनौतियाँ भी उत्पन्न कर रहे हैं। यह शोध-पत्र इन परिवर्तनों का विश्लेषण करते हुए उनके प्रभाव, चुनौतियों और संभावित समाधानों पर गहन विचार प्रस्तुत करता है।

साहित्य समीक्षा

गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति और शिक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण आधार रही है, जिस पर प्राचीन से आधुनिक काल तक विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। प्राचीन ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद और भगवद् गीता में गुरु को ज्ञान का सर्वोच्च स्रोत तथा शिष्य को जिज्ञासु साधक के रूप में वर्णित किया गया है। इन ग्रंथों में गुरु के प्रति श्रद्धा, सेवा और समर्पण को ज्ञान प्राप्ति का मुख्य मार्ग माना गया है। उपनिषदों के संवादात्मक उदाहरण इस परंपरा की गहनता और अनुभवात्मक स्वरूप को दर्शाते हैं।

शिक्षा के ऐतिहासिक अध्ययन में गुरुकुल प्रणाली को आदर्श शिक्षा पद्धति के रूप में स्वीकार किया गया है, जहाँ व्यक्तिगत शिक्षण, नैतिक विकास और अनुशासन पर विशेष बल दिया जाता था। विद्वानों के अनुसार, इस प्रणाली में गुरु केवल शिक्षक नहीं, बल्कि जीवन मार्गदर्शक होता था, जो शिष्य के समग्र व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता था।

मध्यकालीन भक्ति आंदोलन के साहित्य में गुरु-शिष्य संबंध का आध्यात्मिक और सामाजिक स्वरूप उभरकर सामने आता है। संत कबीर, गुरु नानक आदि ने गुरु को ईश्वर तक पहुँचने का माध्यम बताया तथा सामाजिक जागरूकता का संदेश दिया।

आधुनिक काल में शिक्षा प्रणाली में आए परिवर्तनों पर अनेक शोध किए गए हैं। तकनीकी विकास, शिक्षा का संस्थानीकरण और व्यावसायीकरण ने गुरु-शिष्य संबंध को अधिक औपचारिक बना दिया है। समकालीन अध्ययनों में यह पाया गया है कि डिजिटल शिक्षा ने ज्ञान को सुलभ बनाया है, परंतु इससे व्यक्तिगत संबंधों और नैतिक मूल्यों में कमी आई है।

हाल के शोध इस परंपरा के पुनर्जीवन हेतु नैतिक शिक्षा, मेंटरशिप और तकनीक के संतुलित उपयोग पर बल देते हैं। निष्कर्षतः, साहित्य यह दर्शाता है कि परंपरा और आधुनिकता के समन्वय से गुरु-शिष्य परंपरा को पुनः सशक्त बनाया जा सकता है।

अनुसंधान पद्धति

यह शोध-पत्र मुख्यतः गुणात्मक अनुसंधान पद्धति पर आधारित है, जिसमें वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का उपयोग किया गया है। अध्ययन के अंतर्गत गुरु-शिष्य परंपरा के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य का गहन विश्लेषण किया गया है।

इस शोध में द्वितीयक स्रोतों (का प्रमुख रूप से उपयोग किया गया है। इसके अंतर्गत प्राचीन ग्रंथों जैसे वेद, उपनिषद, भगवद् गीता, विभिन्न शोध-पत्रों, पुस्तकों, शैक्षणिक लेखों का अध्ययन किया गया है। साथ ही, आधुनिक शिक्षा प्रणाली से संबंधित समकालीन विचारों एवं प्रवृत्तियों का भी समावेश किया गया है।

शोध में तुलनात्मक विधि का उपयोग करते हुए प्राचीन और आधुनिक गुरु-शिष्य परंपरा के स्वरूप, विशेषताओं एवं चुनौतियों की तुलना की गई है। इसके अतिरिक्त, आलोचनात्मक विश्लेषण के माध्यम से वर्तमान समस्याओं जैसे व्यावसायीकरण, तकनीकी प्रभाव एवं मानवीय संबंधों में कमी का मूल्यांकन किया गया है।

गुरु-शिष्य परंपरा में गुरु का महत्व

भारतीय परंपरा में "गुरु" शब्द का अर्थ केवल शिक्षक नहीं, बल्कि जीवन के अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करने वाला मार्गदर्शक होता है। "गु" का अर्थ अंधकार और "रु" का अर्थ प्रकाश माना गया है। इस प्रकार गुरु वह है जो अज्ञानता को समाप्त कर ज्ञान का प्रकाश प्रदान करता है।

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः"1

भारतीय संस्कृति में गुरु को ब्रह्मा, विष्णु और महेश के समान दर्जा दिया गया है। संगीत जगत में भी गुरु को इसी मान सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है क्योंकि गुरु के माध्यम से ही संस्कार शिक्षा के गुण, अच्छा आचरण और एक परंपरा शिष्य को मिलती है।

प्राचीन समय में गुरु-शिष्य संबंध अत्यंत निकट और आत्मीय होते थे। शिष्य अपने गुरु के साथ रहकर शिक्षा प्राप्त करता था, जिससे उसमें अनुशासन, संयम और सेवा भावना विकसित होती थी।

श्रीमद् भागवत गीता से उद्धृत

तद्विद्धिविधि प्राणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिन:।।34।। अध्याय-4[2]

अर्थात- तुम गुरु के पास जाकर सत्य को जानने का प्रयास करो। उनसे विनीत होकर जिज्ञासा प्रकट करो और उनकी सेवा करो। स्वरूपसिद्ध व्यक्ति तुम्हें ज्ञान प्रदान कर सकते हैं, क्योंकि उन्होंने सत्य का दर्शन किया है।

यह केवल एक श्लोक नहीं, बल्कि भारतीय समाज की उस गहरी आस्था का प्रतीक है, जिसमें गुरु को सृष्टि के निर्माण, पालन और परिवर्तन का माध्यम माना गया है। गुरु केवल शिक्षक नहीं होता, बल्कि वह जीवन का मार्गदर्शक, प्रेरक और मूल्य-निर्माता होता है।

गुरु-शिष्य परंपरा की विशेषताएँ

1. व्यक्तिगत शिक्षण

प्राचीन समय में गुरु-शिष्य परंपरा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता व्यक्तिगत शिक्षण प्रणाली थी।"शिष्य अपने बाल्य काल में ही अधिकतर गुरु के सानिध्य में आ जाता था, जहां गुरु की पूर्ण निगरानी में उसकी कला के साथ-साथ उसके व्यक्तित्व एवं गुणों का विकास हो जाता था। गुरु के समीप शिष्य का पूर्ण जीवन अनुशासित होकर जीवन मूल्यों के प्रति सजग हो जाता था। गुरु के प्रति निष्ठा, भक्ति तथा कला, साधना, कठिन अभ्यास के कारण उसमें विनम्रता, विनयशीलता, ईश्वर के प्रति आस्था, कर्तव्यनिष्ठा, मातृभूमि के प्रति लगाव आदि गुण प्रस्फुटित हो जाते थे।"[3]

गुरु प्रत्येक शिष्य की बौद्धिक क्षमता, मानसिक स्थिति, रुचि और स्वभाव का गहराई से अध्ययन करता था। उसके अनुसार शिक्षा प्रदान की जाती थी।

2. नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा

गुरु-शिष्य परंपरा का एक प्रमुख आधार नैतिकता और आध्यात्मिकता थी। गुरु सदैव अपने शिष्यों को सत्यवादिता, अनुशासन, सेवा भाव और कर्तव्यनिष्ठा जैसे प्रमुख नैतिक मूल्यों का ज्ञान देता था। शिष्य अपने गुरु के मार्गदर्शन में आत्मा और ब्रह्म का ज्ञान, ध्यान और साधना और जीवन के उद्देश्य की शिक्षा ग्रहण करते थे। गुरु केवल ज्ञान नहीं देता था, बल्कि शिष्य को "जीवन जीने की कला" सिखाता था।

3. मौखिक परंपरा

गुरु-शिष्य परंपरा मुख्यतः मौखिक थी। इस में ज्ञान का संप्रेषण मुख्यतः सुनने, दोहराने और याद करने की प्रक्रिया से होता था। वेद, उपनिषद, संगीत, नृत्य और अन्य विद्या शाखाएँ इसी मौखिक विधि से पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रहीं। गुरु अपने अनुभव और ज्ञान को सीधे शिष्य को सुनाकर और समझाकर देता था। शिष्य बार-बार सुनकर, दोहराकर और अभ्यास करके ज्ञान को आत्मसात करता था। हर शिष्य की क्षमता के अनुसार गुरु उसे अलग-अलग तरीके से सिखाता था।

गुरु-शिष्य परंपरा की विशेषताएँ इसे केवल एक शैक्षिक प्रणाली नहीं, बल्कि एक संपूर्ण जीवन-दर्शन बनाती हैं। इन विशेषताओं में ज्ञान, व्यवहार, नैतिकता और आध्यात्मिकता का समन्वय दिखाई देता है।

गुरु-शिष्य परंपरा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति की एक प्राचीन और महत्वपूर्ण विशेषता है, जिसकी जड़ें वैदिक काल तक पहुँचती हैं।

वैदिक काल में शिक्षा का प्रमुख केंद्र "गुरुकुल" हुआ करता था, जहाँ विद्यार्थी अपने गुरु के आश्रम में रहकर शिक्षा ग्रहण करते थे। "शिष्य को गुरु के साहचर्य में रहकर सच्चरित्र तथा एकाग्रचित्त होकर विद्याध्ययन करना होता था। उस समय तीव्रता, लगन तथा गुरु निष्ठा इत्यादि गुणों की कसौटी पर खरा उतरने के पश्चात तथा गुरु की आज्ञा का पूर्ण पालन करने के उपरांत ही शिष्य को गुरु की कृपा तथा विद्या प्राप्त होती थी।"4 इस प्रणाली में विद्यार्थी न केवल वेद, उपनिषद, और शास्त्रों का अध्ययन करते थे, बल्कि जीवन के व्यावहारिक कौशल, नैतिकता, और आत्मसंयम भी सीखते थे। गुरुकुल व्यवस्था में शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि समग्र व्यक्तित्व का निर्माण था। "गुरु के समीप रहने का अवसर, शिक्षा को दिए जाने वाला समय, गुरुग्रह में रहते शिष्यों की शिक्षा ग्रहण करने की तथा याद रखने की क्षमता और बराबर दोहराकर आत्मसात करने में सालों तक का लगता समय, यह सारी बातें इस शिक्षा प्रणाली में महत्व रखती है।"5

उपनिषदों में गुरु-शिष्य संवाद के अनेक उदाहरण मिलते हैं, जैसे नचिकेता और यम, या श्वेतकेतु और उद्दालक का संवाद। महाकाव्य काल में भी गुरु-शिष्य परंपरा का विशेष स्थान रहा। "महाभारत" में द्रोणाचार्य और उनके शिष्यों (अर्जुन, एकलव्य आदि) का वर्णन इस परंपरा की विविधता को दर्शाता है। यहाँ यह भी स्पष्ट होता है कि सामाजिक संरचनाओं और सीमाओं का इस परंपरा पर प्रभाव पड़ता था।

मध्यकाल में भक्ति आंदोलन के दौरान गुरु-शिष्य परंपरा ने एक नया रूप लिया। संत कबीर, गुरु नानक, और अन्य संतों ने इस परंपरा को आध्यात्मिक जागरण और सामाजिक सुधार के साधन के रूप में उपयोग किया। इस समय गुरु केवल शिक्षक नहीं, बल्कि मार्गदर्शक और आध्यात्मिक नेता के रूप में उभरे। कबीर जी का प्रसिद्ध दोहा -

"गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूँ पाय।

बलिहारी गुरु आपने, गोविंद दियो बताय।"[6]

- गुरु की महानता को दर्शाता है।

इस काल में गुरु केवल शिक्षक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक मार्गदर्शक भी थे।

आधुनिक समय में गुरु शिष्य परंपरा में परिवर्तन के प्रमुख कारण

शिक्षा का संस्थानीकरण: आधुनिक युग में शिक्षा गुरुकुल से निकलकर स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों तक सीमित हो गई है। "आजकल संस्थागत शिक्षा पद्धति का जो स्वरूप हमारे सामने है उसमें गुरु तथा शिष्य संबंध मर्यादित अवधि के लिए ही होता है निरंतरता और सत्य का उसमें अभाव है।"[7] इससे गुरु-शिष्य संबंध औपचारिक हो गया है।

तकनीकी क्रांति और डिजिटल शिक्षा: आधुनिक युग में तकनीकी विकास और इंटरनेट ने शिक्षा के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया है। ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल प्लेटफॉर्म और वर्चुअल कक्षाओं के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करना आसान हो गया है। अब शिष्य को गुरु के पास जाकर शिक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। वह घर बैठे ही विभिन्न स्रोतों से ज्ञान अर्जित कर सकता है। इससे शिक्षा का लोकतंत्रीकरण तो हुआ है, लेकिन गुरु-शिष्य संबंध की आत्मीयता में कमी आई है।

शिक्षा का व्यावसायीकरण: आज के समय में शिक्षा अधिक व्यावसायिक हो गई है। निजी शिक्षण संस्थानों की बढ़ती संख्या और शिक्षा का बाजारीकरण इस बात का प्रमाण है। शिक्षक अब केवल ज्ञान देने वाला व्यक्ति नहीं, बल्कि एक पेशेवर बन गया है। वहीं छात्र भी शिक्षा को एक निवेश के रूप में देखने लगे हैं, जिसका उद्देश्य केवल अच्छे अंक और बेहतर नौकरी प्राप्त करना है। इस दृष्टिकोण ने गुरु-शिष्य संबंध की गहराई को प्रभावित किया है।

A Pratibha Spandan Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 14, Issue 02, April 2026 (Special Issue)

This paper was presented at the 'Swar Sanskar National Seminar', organized by Swar Sanskar Sangeet Gurukul
Seminar Convener: Dr. Yash Sanjay Dewale (Co-Founder: Swar Sanskar Sangeet Gurukul, Assistant Professor: MSU Baroda)

सामाजिक संरचना में परिवर्तन: इसके अतिरिक्त, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों ने भी इस परंपरा को प्रभावित किया है। पहले जहां गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण और आज्ञाकारिता अपेक्षित थी, वहीं आज के छात्र अधिक प्रश्न पूछने वाले और स्वतंत्र विचारधारा के होते हैं। यह परिवर्तन सकारात्मक भी है क्योंकि यह आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देता है, लेकिन इससे पारंपरिक गुरु-शिष्य संबंध की संरचना में बदलाव आया है।

हालांकि, यह कहना उचित नहीं होगा कि गुरु-शिष्य परंपरा पूरी तरह समाप्त हो गई है। आज भी कई क्षेत्रों में यह परंपरा जीवित है, जैसे शास्त्रीय संगीत, नृत्य, योग और आध्यात्मिक शिक्षा। इन क्षेत्रों में गुरु और शिष्य के बीच का संबंध अभी भी गहरा और समर्पित होता है। शिष्य अपने गुरु से न केवल कला सीखता है, बल्कि जीवन जीने की कला भी सीखता है।

आधुनिक समय में इस परंपरा को पुनर्जीवित करने के प्रयास भी किए जा रहे हैं। कई शिक्षण संस्थान अब वैल्यू एजुकेशन और मेंटरशिप प्रोग्राम के माध्यम से गुरु-शिष्य संबंध को मजबूत करने का प्रयास कर रहे हैं। शिक्षक केवल विषय विशेषज्ञ न होकर एक मार्गदर्शक की भूमिका निभाने लगे हैं। वहीं छात्र भी अपने शिक्षकों से प्रेरणा लेने का प्रयास कर रहे हैं।

आधुनिक गुरु शिष्य परंपरा की चुनौतियां

आधुनिक समय में गुरु-शिष्य परंपरा के सामने जो चुनौतियाँ उभरकर आई हैं, वे केवल शिक्षा प्रणाली के परिवर्तन का परिणाम नहीं हैं, बल्कि सामाजिक, तकनीकी और आर्थिक बदलावों से भी गहराई से जुड़ी हुई हैं।

मानवीय संबंधों की कमी

पारंपरिक गुरु-शिष्य परंपरा की सबसे बड़ी विशेषता गुरु और शिष्य के बीच गहरा, व्यक्तिगत और भावनात्मक संबंध था। गुरुकुल प्रणाली में शिष्य गुरु के साथ रहकर शिक्षा प्राप्त करता था, जिससे उनके बीच विश्वास, सम्मान और आत्मीयता विकसित होती थी।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में यह संबंध काफी हद तक औपचारिक हो गया है। आज शिक्षक और छात्र के बीच संबंध कक्षा तक और विषय-विशेष तक सीमित रहता है।ऑनलाइन शिक्षा (Online Learning) के कारण यह दूरी और बढ़ गई है। शिक्षक के पास छात्रों के लिए व्यक्तिगत समय नहीं होता। छात्रों के मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक विकास पर कम ध्यान दिया जाता है।

इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षा केवल सूचना तक सीमित रह जाती है, जबकि व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया कमजोर पड़ जाती है।

ज्ञान का सतहीकरण

प्राचीन समय में ज्ञान गहन (Deep) और अनुभवात्मक (Experiential) होता था। गुरु शिष्य को केवल जानकारी नहीं देता था, बल्कि उसे समझने, आत्मसात करने और जीवन में लागू करने की प्रक्रिया भी सिखाता था।

वर्तमान समय में परीक्षा-केन्द्रित शिक्षा, रटने की प्रवृत्ति और इंटरनेट पर त्वरित जानकारी की उपलब्धता के कारण ज्ञान का स्वरूप अधिक सतही होता जा रहा है। छात्र अक्सर गहराई से समझने के बजाय केवल अंकों (Marks) के लिए पढ़ते हैं। इससे उनकी विश्लेषणात्मक क्षमता और रचनात्मक सोच प्रभावित होती है।

इसके अलावा, डिजिटल माध्यमों पर उपलब्ध जानकारी की अधिकता भी ज्ञान को सतही बना देती है, क्योंकि छात्र किसी विषय पर गहराई से ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते।

गुणवत्ता में गिरावट

गुरु-शिष्य परंपरा में शिक्षा की गुणवत्ता अत्यंत उच्च होती थी, क्योंकि गुरु स्वयं अत्यंत विद्वान और अनुभवी होते थे। उनके द्वारा दी गई शिक्षा व्यक्तिगत और अनुकूलित होती थी। इस परंपरा में शिष्य की प्रगति पर निरंतर ध्यान दिया जाता था।

आज की शिक्षा प्रणाली में कई कारणों से गुणवत्ता में गिरावट देखी जा रही है। बड़ी संख्या में छात्रों के कारण व्यक्तिगत ध्यान देना संभव नहीं है। शिक्षकों पर प्रशासनिक और अन्य कार्यों का बोझ बढ़ गया है। आजकल शिक्षण को एक पेशे के रूप में देखा जाने लगा है, न कि एक तपस्या के रूप में।

इसके परिणामस्वरूप शिक्षा का स्तर कई स्थानों पर औसत या निम्न हो गया है, और छात्रों को समग्र विकास (Holistic Development) नहीं मिल पाता।

व्यावसायिकता का प्रभाव

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में व्यावसायिकता का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया है। शिक्षा संस्थान अब एक व्यवसाय के रूप में कार्य कर रहे हैं। आधुनिक समय में कोचिंग संस्थानों की संख्या तेजी से बढ़ी है जिससे शिक्षा महंगी होती जा रही है और असमानता बढ़ रही है।

इस स्थिति में गुरु-शिष्य संबंध भी प्रभावित होता है। शिक्षक और छात्र के बीच आर्थिक लेन-देन का संबंध प्रमुख हो जाता है। आज शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति के बजाय नौकरी (Job) और आय (Income) तक सीमित हो जाता है।

इससे गुरु-शिष्य परंपरा की आत्मा, जो कि निःस्वार्थ ज्ञान और जीवन मार्गदर्शन पर आधारित थी, कमजोर पड़ जाती है।

समाधान

- मानव मूल्यों का पुनर्स्थापन
  गुरु और शिष्य दोनों को नैतिक मूल्यों और संस्कारों को पुनः अपनाना होगा। शिक्षा प्रणाली में नैतिक शिक्षा को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थियों में गुरु के प्रति सम्मान और अनुशासन की भावना विकसित हो सके।
- तकनीक का संतुलित उपयोग
  तकनीक को पूरी तरह से नकारा नहीं जा सकता, लेकिन उसका संतुलित उपयोग आवश्यक है। ऑनलाइन शिक्षा के साथ-साथ व्यक्तिगत संवाद और मार्गदर्शन को भी महत्व दिया जाना चाहिए।
- शिक्षकों का प्रशिक्षण और प्रेरणा
  शिक्षकों को केवल विषय ज्ञान ही नहीं, बल्कि विद्यार्थियों के मार्गदर्शक के रूप में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। उन्हें प्रेरित किया जाए कि वे अपने कर्तव्यों को केवल नौकरी के रूप में न देखें, बल्कि एक जिम्मेदारी के रूप में निभाएं।
- व्यक्तिगत संबंधों को बढ़ावा
  विद्यालयों और महाविद्यालयों में ऐसी गतिविधियाँ आयोजित की जानी चाहिए, जिससे गुरु और शिष्य के बीच संवाद बढ़े। जैसे - मेंटरशिप प्रोग्राम, व्यक्तिगत मार्गदर्शन सत्र आदि।
- शिक्षा का गैर-व्यावसायीकरण
  शिक्षा को सेवा के रूप में पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। सरकार और समाज को मिलकर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि शिक्षा का उद्देश्य केवल आर्थिक लाभ न होकर ज्ञान और चरित्र निर्माण हो।

निष्कर्ष

गुरु-शिष्य परंपरा भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है, जिसने समाज को दिशा और स्थिरता प्रदान की है। यद्यपि समय के साथ इसका स्वरूप बदला है, लेकिन इसकी मूल भावना आज भी प्रासंगिक है। आवश्यकता इस बात की है कि हम आधुनिकता और परंपरा के बीच संतुलन बनाए रखें और इस परंपरा के मूल्यों को संरक्षित करते हुए उसे नए संदर्भों में विकसित करें। गुरु और शिष्य दोनों को अपने-अपने दायित्वों को समझना होगा ताकि यह परंपरा भविष्य में भी समाज को मार्गदर्शन देती रहे।

इस प्रकार, आधुनिक समय में गुरु-शिष्य परंपरा का बदलता परिदृश्य एक चुनौती भी है और एक अवसर भी – जिसमें हम परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित कर सकते हैं।

संदर्भ

चौबे, अमरेश चंद्र (1988), संगीत की संस्थागत शिक्षण-प्रणाली, कृष्णा ब्रदर्स अजमेर, पृष्ठ 6
अंतरराष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ, श्री मद्भागवद्गीता यथारूप, पृष्ठ 175
बंसल, पी.एन. (डॉ.), शर्मा, मृत्युंजय (डॉ.), संगीत की संस्थागत शिक्षण प्रणाली का अवलोकन: वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, पृष्ठ 209
शर्मा, राधिका, (डॉ.), (2010), भारतीय संगीत को मीडिया और संस्थानों का योगदान, पृष्ठ 12
जोशी बलवंत, (1989), संगीत शिक्षा के आधुनिक संसाधनों का महत्व, गंधर्व महाविद्यालय, मुंबई, 14वां त्रिवार्षिक संगीत सम्मेलन, पत्रिका, पृ69
दास, कबीर, (2008), कबीर ग्रंथावली, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, 2008, पृष्ठ 33
पंडिता, तूलिका (डॉ.), (2023), संगीत शिक्षा के बदलते आयाम, पृष्ठ 119